प्रवाह

निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक
स्थापना वर्ष : 1948

कायर प्यार का प्रदर्शन करने में असमर्थ होता है, प्रेम बहादुरों का विशेषाधिकार है...
-महात्मा गांधी

राजस्थान में आरक्षण के लिए आंदोलन कर रहे गुर्जरों ने जिस तरह हिंसा का सहारा लिया, वह दुर्भाग्यपूर्ण है, लेकिन बेहतर यही होगा कि सूबे की कांग्रेस सरकार जितनी जल्दी संभव हो, इस गतिरोध को खत्म करने के लिए कदम उठाए।

सड़कों पर गुर्जर

सरकारी

नौकरियों और स्कूल-कॉलेजों में पांच फीसदी आरक्षण की मांग के साथ पिछले कई दिनों से रेल पटरियों पर धरना दे रहे गुर्जर समाज द्वारा हिंसा का सहारा लेना दुर्भाग्यपूर्ण है, लेकिन थोड़े समय पहले सत्ता में आई राजस्थान की अशोक गहलोत सरकार के लिए आंदोलनकारियों को वार्ता की मेज पर ले आना फिलहाल उससे ज्यादा चुनौतीपूर्ण दिखाई देता है, क्योंकि उसने पहले से इस बारे में कोई तैयारी नहीं की थी। गुर्जरों के इस बार के आंदोलन से भी रेल यातायात प्रभावित हुआ है, जिसमें दिल्ली-मुंबई रूट भी शामिल है। ऐसे ही राजमार्गों पर यातायात प्रभावित होने के अलावा विगत रविवार को कुछ प्रतियोगी परीक्षाएं भी रोकनी पड़ी हैं। गुर्जर समाज द्वारा आरक्षण की मांग नई नहीं है। राजस्थान में पिछले कम से कम तीन चुनावों से गुर्जर आंदोलन एक बड़ा मुद्दा रहा है। पिछड़े होने के कारण वे आरक्षण के हकदार हैं, इसीलिए विगत में उन्हें आरक्षण दिया भी गया था, जो पचास फीसदी की तय सीमा से अधिक होने के कारण अदालत से खारिज हो गया। लेकिन इससे गुर्जर समाज की मांग अव्यावहारिक नहीं हो जाती। हां, आंदोलन के दौरान वे समय-समय पर जिस तरह हिंसक रुख अख्तियार करते हैं, उसका समर्थन नहीं किया जा सकता। इसके बावजूद इस मामले में राज्य की अशोक गहलोत सरकार का रवैया ज्यादा दोषपूर्ण है। कांग्रेस ने विधानसभा चुनाव से पहले गुर्जरों को पांच फीसदी आरक्षण देने का वायदा किया था। लिहाजा यह रास्ता निकालना सूबे की सरकार की जिम्मेदारी है, जिससे गुर्जरों को आरक्षण का लाभ भी मिले और पचास फीसदी की तय सीमा का उल्लंघन भी न हो। लेकिन सत्ता में आने के बाद गहलोत सरकार ने अपना वायदा निभाने की दिशा में कुछ किया नहीं है। सवाल यह है कि जब गुर्जर नेता रेल पटरियों पर धरना देने जा रहे थे, तब सरकार क्या कर रही थी। अब भी समाधान निकालने के बजाय वह आरक्षण न दे पाने का ठीकरा केंद्र सरकार पर फोड़ने की तैयारी में दिखती है। आरक्षण की मांग के लिए गुर्जर समाज द्वारा हिंसा का रास्ता अख्तियार करना जितना दुखद है, उससे कम दुर्भाग्यपूर्ण वह राजनीति नहीं है, जो सिर्फ अपने लाभ के लिए आरक्षण का दांव चलती है। सरकार के लिए बेहतर यही होगा कि जितनी जल्दी संभव हो सके, वह इस गतिरोध को दूर करने के लिए कदम उठाए।

जब शराब नाश करती है

जहरीली शराब के कारण उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड में हुई मौतें व्यवस्था में आमूलचूल बदलाव की मांग करती हैं। व्यवस्था की लापरवाही का खामियाजा आम लोग आखिर कब तक भुगतते रहेंगे?

राजेंद्र प्रसाद नैनवाल, वरिष्ठ पत्रकार

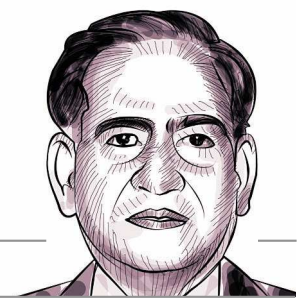

पिछले दिनों उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड में जहरीली शराब से सौ से अधिक मौतें हुईं, जो हमारी सामूहिक स्मृति में जहरीली शराब से हुई सबसे मर्मांतक त्रासदी है। इस त्रासदी से एक बार फिर यह सच्चाई सामने आई है कि जहरीली शराब के उत्पादन और बिक्री पर अंकुश लगाने के मामले में, जिसका नुकसान समाज के सबसे निचले तबके के लोगों को होता है, हमारा प्रशासन कितना लचर और नाकारा है। जो ब्योरे हैं, वे बताते हैं कि यह जहरीली शराब उत्तराखंड में तैयार हुई और इसे उत्तर प्रदेश भेजा गया। हालांकि त्रासदी के बाद दोनों ही राज्यों की सरकारें सक्रिय हुई हैं, लेकिन अगर वे पहले से सतर्क होतीं, तो यह त्रासदी होती ही नहीं।

उत्तर प्रदेश की स्थिति ज्यादा भीषण है। वहां सिर्फ लाशों का आंकड़ा ही चौंकाने वाला नहीं है, अस्पतालों में इलाज के लिए आने वालों की संख्या भी चिंतित करने वाली है। यह उस राज्य का हाल है, जहां जहरीली शराब से आए दिन मौतें होती रहती हैं। अतीत में जहरीली शराब के कारण सूबे के पूर्वी और पश्चिमी हिस्से के कई शहरों में मौत हो चुकी है। इस त्रासदी से पहले कुशीनगर में जहरीली शराब ने कुछ लोगों की जान ली। उत्तर प्रदेश की सरकार ने कुछ अधिकारियों के खिलाफ कार्रवाई की है। लेकिन वह 2017 में ही नकली शराब तैयार करने वालों के खिलाफ मौत की सजा का कानून ले आई थी, इसके बावजूद इस पर रोक नहीं लग सकी। उस कानून में मौत की सजा के अलावा अवैध शराब के कारोबार पर नजर रखने के लिए अस्थायी थाने और चौकियां भी बनाई गईं। लेकिन उस सख्ती का सतह पर कोई नतीजा नहीं दिखा। हर त्रासदी के बाद जांच की बात होती है और आनन-फानन में जांच कमेटी बनाई जाती है। आदित्यनाथ सरकार ने इस त्रासदी की पड़ताल के लिए अतिरिक्त पुलिस महानिदेशक की अध्यक्षता में एक विशेष जांच टीम गठित की है। इस त्रासदी के बाद उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड, दोनों जगह विपक्ष सरकारों पर हमलावर है। पर ये मौतें राजनीतिक तूफान से ज्यादा व्यवस्था में बदलाव लाने की मांग करती हैं।

जहां तक उत्तराखंड की बात है, तो इस राज्य की स्थापना के पीछे यह धारणा थी कि एक सक्रिय और सतर्क राजनीतिक वर्ग पहाड़ों और पहाड़ों की तराई में रहने वाले उपेक्षित लोगों के हित में काम करेगा। लेकिन दुर्भाग्य से ऐसा नहीं हुआ। लोगों की उम्मीदों के साथ खिलवाड़ हुआ। पिछले करीब अट्ठारह साल से उत्तराखंड के लोगों ने भ्रष्टाचार और लापरवाही ही देखी है, जिसका नतीजा कभी-कभी ऐसी ही त्रासदी के रूप में सामने आता है। उत्तराखंड में जहरीली शराब से एक साथ इतने लोग इससे पहले कभी नहीं मारे गए। जबकि नकली शराब पर नजर रखने की जिम्मेदारी पुलिस के जवानों और आबकारी अधिकारियों की है। यह समय राज्य की नौकरशाही और राजनेताओं द्वारा इस त्रासदी की जिम्मेदारी लेने की है। सवाल यह है कि अधिकारियों की लापरवाही से कब तक परिवार तबाह होते रहेंगे। प्रासंगिक सवाल यह है कि जिन अधिकारियों पर जिम्मेदारी निभाने की अपेक्षा थी, वे उसमें चूक कैसे कर गए।

यह तथ्य है कि हर साल मार्च के आसपास राज्य सरकार अपनी आबकारी नीति बनाती है, जिसके पीछे शराब की बिक्री से अधिक से अधिक राजस्व कमाने का लक्ष्य रहता है। और यही वह समय होता है, जब शराब माफिया गोपनीय तरीके से देसी शराब तैयार करने में लग जाते हैं। यह शराब जहरीली होती है, जिसमें मिथनॉल मिलाया जाता है और बिना किसी संदेह के इसका सेवन स्वाभाविक ही बड़े संकट का कारण बनता है। उत्तराखंड में कच्ची शराब की ऐसी दुकानें जिम्मेदार अधिकारियों की मिलीभगत से गोपनीय ढंग से चलती रहती हैं। समय-समय पर राज्य की अलग-अलग जगहों में कच्ची शराब की ऐसी सैकड़ों भट्ठियां पकड़ी गई हैं। इस धंधे में लगे लोग कुछ समय के लिए जेल में रहते हैं, फिर जमानत पर बाहर आकर इसी गैरकानूनी धंधे में लग जाते हैं।

उत्तराखंड जैसे नए राज्य में शराब की भारी खपत है, तो इसकी कई वजहें हैं। उत्तराखंड में रिटायर्ड सैनिकों की एक बड़ी आबादी है, जो ज्यादातर ग्रामीण इलाकों में रहती है, और जिसका बड़ा हिस्सा शराब का आदी है। शराब पीने की इनकी आदत ने ग्रामीणों और उनके आसपास के लोगों को शराब की ओर आकर्षित किया है। लेकिन शराब पीने वाले सभी लोग महंगी और ब्रांडेड शराब नहीं पी सकते। ग्रामीण इलाकों में खासकर समाज के निचले तबके के लोग देसी शराब पीते हैं। पुलिस और आबकारी विभाग के निचले स्तर के कर्मचारी गोपनीय ढंग से बनने और बिकने वाली देसी शराब से अपनी आंखें मूंदे रहते हैं। इस तरह बेरोजगार युवा आसानी से सस्ती देसी शराब के चंगुल में फंस जाते हैं। इससे शराब पीने की उनकी आदत भी बरकरार रहती है और इसके लिए उन्हें ज्यादा पैसे भी नहीं खर्च करने पड़ते। इस प्रक्रिया में वे इस सच्चाई से भी आंख मूंद लेते हैं कि सस्ती शराब पीने की उनकी यह लत उनकी जान भी ले सकती है।

दरअसल शराब की अधिक बिक्री राजस्व हासिल करने का एक पसंदीदा स्रोत है, इसी कारण हर साल नए इलाके में शराब के ठेके दिए जाते हैं। कई बार इन ठेकों में मिलावटी शराब बिकने या शराब के अधिक दाम वसूले जाने की शिकायतें आती हैं। लेकिन शायद ही कोई इन शिकायतों पर गंभीरता दिखाता है। अब उत्तराखंड सरकार भी जहरीली शराब तैयार करने वालों के लिए मृत्युदंड जैसी सख्त सजा लाने की बात कह रही है।

जब उत्तराखंड उत्तर प्रदेश का हिस्सा था, तब महिला मंगल दल के शराब-विरोधी आंदोलनों के कारण तत्कालीन पश्चिमी उत्तर प्रदेश के आठ पहाड़ी जिलों में शराब पर प्रतिबंध लगा था। पर मुलायम सिंह के मुख्यमंत्री बनते ही उन जिलों में प्रतिबंध हट गया और पहाड़ पर शराब के नए ठेके खोले गए। लोगों को उम्मीद थी कि अलग राज्य बनने के बाद उत्तराखंड सरकार सभी तरह की शराबों के उत्पादन और बिक्री पर कठोर शर्तें लगाएगी। पर अधिक से अधिक राजस्व कमाने के लालच के कारण राज्य की उत्तरोत्तर सरकारों ने शराब के उत्पादन और बिक्री पर लचीला रुख अपनाया, जिसका नतीजा मौजूदा त्रासदी के रूप में हमारे सामने है।

अंतर्ध्वनि
>> तपन सिन्हा

एक फिल्म देख मैंने फिल्मकार बनने की बात ठान ली थी

मेरा जन्म कोलकाता में हुआ, जबकि मेरी पढ़ाई भागलपुर में हुई। बाद में मैंने पटना और कोलकाता विश्वविद्यालय में साइंस से पढ़ाई पूरी की। चार्ल्स डिकेंस के उपन्यास अ टेल ऑफ टू सिटीज ने मुझे बेहद प्रभावित किया था। इस पर आधारित फिल्म देखने के बाद, जिसमें रोनाल्ड कोलमैन की मुख्य भूमिका थी, मैंने ठान लिया कि मुझे फिल्म निर्देशन के क्षेत्र में ही जाना है। यही लक्ष्य मुझे लंदन में फिल्म की पढ़ाई के लिए ले गया। समकालीन अमेरिकी और ब्रिटिश फिल्मों ने भी मुझे बेहद प्रभावित किया। जॉन फोर्ड, कैरोल रीड, बिली विल्डर की फिल्में देखने के बाद मैं सोचता कि मुझे भी ऐसी ही फिल्में बनानी हैं। हालांकि मेरी पहली फिल्म ऑ टो ग्रा फ सत्यजित राय की नायक फिल्म से बहुत प्रभावित थी। लेकिन धीरे-धीरे मैंने अपनी अलग पहचान बनाई। मैंने रवींद्रनाथ की कहानी काबुलीवाला पर इसी नाम से फिल्म बनाई, जिसे छवि विश्वास ने अपने अभिनय से अमर कर दिया। इसी तरह ताराशंकर बंद्योपाध्याय, शंकर, बनफूल आदि की कहानियों पर भी मैंने फिल्में बनाईं। रवींद्रनाथ से प्रभावित होने के कारण मैंने अनेक फिल्मों में रवींद्र संगीत का इस्तेमाल किया है। अपनी फिल्म सगीना महतो में मैंने दिलीप कुमार को लिया था। सगीना नाम से यह फिल्म हिंदी में भी बनी। आदमी और औरत तथा एक डॉक्टर की मौत जैसी हिंदी फिल्मों का भी मैंने निर्देशन किया है। एक फिल्मकार के तौर पर मैं अपने कामकाज से संतुष्ट हूं। अपने पूरे कॅरिअर में मैंने दो चीजों पर खास ध्यान दिया। एक तो कोई भी कहानी मैंने नहीं दोहराई। और दूसरा यह कि जटिल जीवन स्थितियों को सहज बनाकर पेश करने में मैंने विश्वास किया। हालांकि यह एक बेहद हैरान करने वाला तथ्य है कि बांग्ला में मुझे उतना महत्व सिर्फ इसलिए नहीं दिया गया, क्योंकि मेरी फिल्में व्यावसायिक रूप से सफल रही हैं।

-चर्चित बांग्ला फिल्म निर्देशक

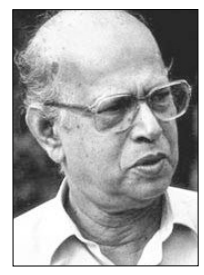

मंजिलें और भी हैं
>> रीवा तुलपुले

हमउम्रों की फिक्र में किया सैकड़ों का भला

मेरी उम्र तेरह साल है और मैं आठवीं कक्षा में पढ़ती हूं। वैसे तो मैं दुबई में रहती हूं, लेकिन मूलतः मेरा परिवार महाराष्ट्र से ताल्लुक रखता है। मेरे पिता दुबई में व्यापार करते हैं। एक दशक से ज्यादा वक्त हो गया है, जब हमारा परिवार भारत से यहां आकर बस गया था। भले ही मैं हिंदुस्तान से दूर रहती हूं, लेकिन मैं अपने मुल्क के बारे में ज्यादा से ज्यादा जानने की कोशिश करती हूं। वहां क्या चल रहा है। वहां की राजनीति में क्या चल रहा है। वहां की फिल्मों में क्या दिखाया जा रहा है, मेरी दिलचस्पी सभी चीजों में होती है। हाल ही में जब मैंने पैडमैन फिल्म देखी, तो मुझे पहली दफा भारत की गरीब किशोरियों की समस्या के बारे में पता चला। मैंने उनकी समस्याओं को खुद से जोड़कर देखा। मुझे बहुत दुख हुआ कि मेरे देश की लड़कियों को अपनी जरूरतों के लिए किस हद तक वंचित रहना पड़ता है।

लेकिन मैं सिर्फ दुखी रहना नहीं चाहती थी। मैंने सोचा कि क्यों न मैं अपने स्तर से अपने देश की कुछ महिलाओं की मदद करूं। मैं मदद की कई योजनाओं पर विचार करने लगी। इसी बीच संयोग यह हुआ कि भारत के कोंकण स्नातक क्षेत्र से एमएलसी निरंजन देवखरे का दुबई आना हुआ। मुझे उनके दौरे के बारे में जानकारी हुई, तो मैंने उनसे मुलाकात की। मैंने उनसे अपनी चिंता साझा कि और कहा कि मैं कुछ करना चाहती हूं। उन्होंने मुझे प्रोत्साहित करते हुए हरसंभव मदद करने का भरोसा दिया।

दिवाली जैसे भारतीय त्योहारों पर लोगों के जमावड़े में भी मैंने चंदा मांगने में संकोच नहीं किया।

इसके बाद मैंने दुबई में अभियान चलाते हुए कुछ राशि इकट्ठा की। मैंने फेसबुक पर एक पेज बनाया और उसके जरिये भी लोगों से मदद की अपील की। यही नहीं, दिवाली जैसे भारतीय त्योहारों पर भारतीय समुदाय के जमावड़े में भी लोगों से चंदा मांगने में मैंने संकोच नहीं किया। मैंने इस आधार पर राशि एकत्रित की कि कम से कम दो-तीन सौ लड़कियों के साल भर की जरूरत भर के सैनेटरी नैपकिन की व्यवस्था हो जाए। दुबई की मुद्रा के हिसाब से यह रकम प्रति महिला बीस दिरहम थी। मैं इसी योजना पर आगे बढ़ी। सौभाग्य से जल्द ही मैंने अपना लक्ष्य प्राप्त कर लिया। मैं विगत दिसंबर में खास इसी काम के लिए भारत आई और विभिन्न स्कूलों में जाकर सैकड़ों लड़कियों को साल भर की जरूरत के सैनिटरी पैड बाटें। इस पूरे कार्यक्रम में उन्हीं एमएलसी साहब ने मदद की, जिन्होंने दुबई में मुझे भरोसा दिया था। उनके एनजीओ समन्वय प्रतिष्ठान ने, जो कि यहां महाराष्ट्र में तमाम तरह के सामाजिक काम करता रहता है, मेरे कार्यक्रम की रूपरेखा तय की।

अब तक की मेरी संक्षिप्त जिंदगी की यह पहली कहानी नहीं है। मैं इससे पहले भी दुबई में ई-वेस्ट मैनेजमेंट को लेकर एक मुहिम चला चुकी हूं। दरअसल मेरे दिमाग में समाज की विभिन्न समस्याओं के बारे में ख्याल चलते रहते हैं। बेकार होने वाले इलेक्ट्रॉनिक गैजटों के निपटान के लिए मैंने वैज्ञानिक पद्धति के बारे में जानकारी इकट्ठा की थी। और मैंने यह कवायद इसलिए की थी, क्योंकि मैंने पढ़ा था कि आने वाले समय में ई-कचरा पर्यावरण के लिए बड़ी समस्या बनने वाला है। मैंने अपनी सोसाइटी में मुहिम चलाकर कई किलो ई-कचरा इकट्ठा करके उसका निपटान किया।

-विभिन्न साक्षात्कारों पर आधारित।

अरबी माटी में हिंदी की बयार

भारतीयता और स्थानीयता की बात करना पिछड़ेपन की निशानी माना जाने लगा है। दुर्भाग्यवश अपने उच्च प्रशासनिक और न्यायिक तंत्र में भी ऐसी सोच रखने वाले लोग हैं। ऐसे लोगों के लिए अबू धाबी का फैसला आंख खोलने वाला हो सकता है।

उमेश चतुर्वेदी

जब अपने ही देश में हिंदी और भारतीय भाषाएं अंग्रेजी के वर्चस्व के सामने जूझ रही हों, तब दूर-देश से हिंदी के समर्थन में खबर आती है, तो वह राहत ही महसूस कराती है। अरब देश संयुक्त अरब अमीरात (यूएई) से आई खबर निश्चित तौर पर भारतीय भाषाओं में सरकारी और न्यायिक कामकाज होने का सपना देखने वाले लोगों के लिए उत्साह की वजह बन सकती है।

अमीरात में अबू धाबी के न्यायिक विभाग ने अपने यहां न्यायिक सुनवाई की भाषा के तौर पर हिंदी को भी मंजूरी दे दी है। इसके पहले वहां अरबी और अंग्रेजी में ही न्यायिक और प्रशासनिक कामकाज होता था। लेकिन भारतीयों की इस देश में बढ़ती संख्या के मद्देनजर वहां की सरकार ने हिंदी में भी न्यायिक सुनवाई और फैसला सुनाने की व्यवस्था को मंजूरी दे दी है। अब जरा अपने देश को देखिए। यहां भारतीय भाषा अभियान को इसके लिए लगातार संघर्ष करना पड़ रहा है। भारत के समाजवादियों और राष्ट्रवादियों में भले ही तमाम मुद्दों पर विरोध हो, लेकिन कुछ मुद्दों के साथ भाषा भी ऐसा मुद्दा है, जिस पर दोनों समान सोच रखते हैं। दोनों की ही मांग रही है कि भारतीय भाषाओं को प्रशासनिक और न्यायिक तंत्र में तरजीह दी जाए।

लेकिन इस विचार के दुश्मन अंग्रेजी माध्यमों से पढ़े-लिखे वे लोग ही रहे हैं, जो प्रशासनिक और न्यायिक तंत्र के उच्च और प्रभावी पदों पर विराजमान हैं। यह विरोधाभास नहीं तो और क्या है कि अंग्रेजी की एबीसीडी भी न जानने वाले शख्स को यह पता नहीं होता कि उसने अपने अधिकार और इंसाफ के लिए हाई कोर्ट या सुप्रीम कोर्ट में जो अपील दायर की है, उसमें उसकी बात रखी भी गई है या नहीं। ऐसे में जो न्याय हो रहा है, वह सचमुच में हो भी रहा है या नहीं, यह न तो वादी को सही तरीके से पता होता और न ही प्रतिवादी को। न्याय की भाषा में कहा जाता है कि न्याय को होता हुआ दिखना भी चाहिए।

लेकिन सांविधानिक प्रावधानों के चलते क्या ऐसा संभव हो पाता है? अपने को सभ्य मानने वाली लोकतांत्रिक प्रणालियां कम से कम इस मोर्चे पर खुद को ईमानदार दिखाने की कोशिश जरूर करती हैं। अमेरिका और ब्रिटेन जैसे देशों में जब कोई गैर अंग्रेजी भाषी व्यक्ति निरुद्ध किया जाता है या गिरफ्तार किया जाता है, तो उसे बाकायदा उसकी भाषा का अनुवादक मुहैया कराया जाता है।

अब जरा भारत की स्थिति पर नजर डालते हैं। आजाद भारत में जब भी भारतीय लोगों को भारतीय भाषाओं में इंसाफ देने की मांग सामने आती है, संविधान के अनुच्छेद 348 के खंड (1) का उपखंड (क) आड़े आ जाता है, जिसके तहत सुप्रीम कोर्ट और हाई कोर्ट की कार्यवाही अंग्रेजी भाषा में किए जाने का प्रावधान है। हालांकि इसी अनुच्छेद के खंड (2) के तहत किसी राज्य का राज्यपाल उस राज्य के हाईकोर्ट में हिंदी भाषा या उस राज्य की राजभाषा का प्रयोग राष्ट्रपति की अनुमति से प्राधिकृत कर सकता है। इसी के तहत 1972 में देश के चार राज्यों उत्तर प्रदेश, बिहार, राजस्थान और मध्य प्रदेश के हाई कोर्ट को हिंदी में भी सुनवाई करने की स्वीकृति मिली।

भारत में जब भी कोई उच्च न्यायपालिका में भारतीय भाषाओं में अपनी बात रखने की कोशिश करता है, उस पर व्यंग्य किए जाते हैं या फिर उसे अपनी बात रखने से रोक दिया जाता है। अब तो ऐसा माहौल है कि भारतीयता और स्थानीयता की बात करना पिछड़ेपन की निशानी माना जाने लगा है। दुर्भाग्यवश अपने उच्च प्रशासनिक और न्यायिक तंत्र में भी ऐसी सोच रखने वाले लोग हैं। ऐसे लोगों के लिए अबू धाबी के न्यायिक विभाग का फैसला आंख खोलने वाला हो सकता है।

खुली खिड़की

बढ़ते हवाई यात्री

पिछले कुछ वर्षों में भारत में हवाई यात्रियों की संख्या में खासी बढ़ोतरी हुई है। इसकी वजह से देश के सभी प्रमुख हवाई अड्डों की हलचल पर भी असर पड़ा है।

आंकड़े- प्रमुख हवाई अड्डों पर यात्रियों की संख्या, वर्ष 2017-18 में

सर्वोत्कृष्ट गुण

भगवान श्रीराम समय-समय पर अपने गुरुदेव वशिष्ठ जी के आश्रम में जाकर उनका सत्संग किया करते थे। एक दिन सत्पुरुषों के सत्संग के महत्व पर प्रकाश डालते हुए महर्षि वशिष्ठ जी ने कहा, रघुकुल भूषण राम! जिस प्रकार दीपक अंधकार का नाश करता है, उसी प्रकार विवेक ज्ञान संपन्न महापुरुष हृदय स्थित अज्ञानरूपी अंधेरे को सहज ही में हटा देने में सक्षम होते हैं। इसलिए सभी धर्मग्रंथों में प्रतिदिन किसी न किसी सत्पुरुष के सत्संग तथा शास्त्रों के स्वाध्याय पर बल दिया गया है। महर्षि वशिष्ठ ने अपने शिष्य श्रीराम से आगे कहा, विवेकी महापुरुष इंद्रियनिग्रही, परम विरक्त तथा हर क्षण ब्रह्म का चिंतन करने वाले होते हैं। जिनमें तमोगुण का सर्वथा अभाव है, जो रजोगुण से रहित है, जिनमें संसार के प्रति वैराग्य सुदृढ़ हो जाता है, ऐसे सत्पुरुषों का सान्निध्य बड़े भाग्य और पुण्य से प्राप्त होता है। उनका सान्निध्य पाते ही सभी सांसारिक भोगों की तृष्णा नष्ट हो जाती है। आनंदस्वरूप आत्मा की अनुभूति हो जाने से साधक धन-संपत्ति, भोग-वैभव त्याग देने को सहज ही तत्पर हो जाता है। श्रीराम ने पूछा, गुरुवर, ऐसे महापुरुष का सर्वोत्कृष्ट गुण क्या होता है? वशिष्ठ बोले, उसका नाम है विवेक। विवेक अधिकारी पुरुष की हृदयरूपी गुफा में ऐसे स्थित हो जाता है, जैसे निर्मल आकाश में चंद्रमा। विवेक ही वासनायुक्त अज्ञानी जीव को ज्ञान प्रदान करता है। ज्ञानस्वरूप आत्मा ही सबसे बड़ा परमेश्वर है। ज्ञानरूपी चिदात्म सूर्य का उदय होते ही संसाररूपी रात्रि में विचरता हुआ मनरूपी पिशाच नष्ट हो जाता है।

सत्संग

-संकलित

हरियाली और रास्ता

नमन, स्विमिंग पूल और हौसला

एक नि:शक्त युवा की कहानी, जिसने प्रतियोगिता में हिस्सा लेकर अपने जैसे अनेक बच्चों में उम्मीद जगाई।

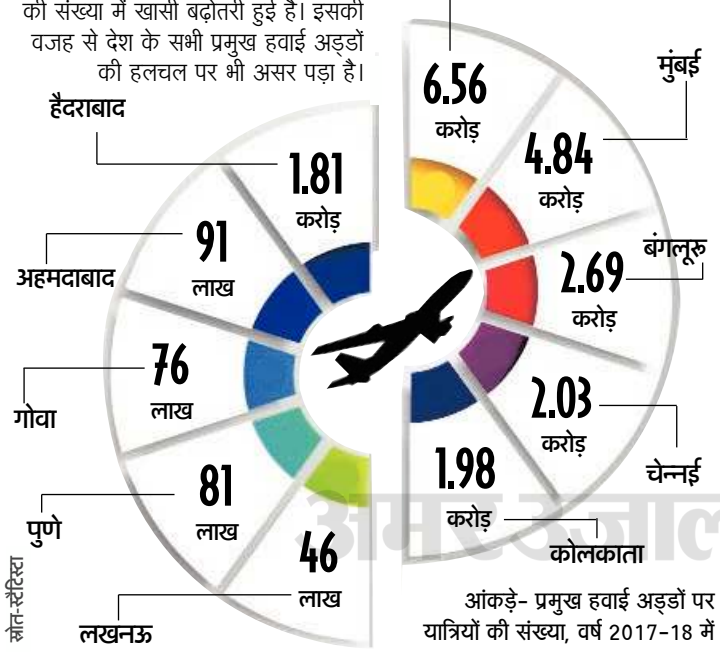

नमन स्विमिंग पूल के किनारे एक छोटी-सी कुर्सी पर बैठा हुआ था। वह पूल में डुबकी मारने के लिए तैयार था। पर पानी गहरा था और नमन को पानी से बहुत डर लगता था। बाकी के सारे तैराक अपनी पोशाक पहने पूल के पास इकट्ठा हो गए थे। नमन सारे तैराकों को वर्जिश करते हुए देख रहा था। तभी एक छोटा-सा लड़का नमन के पास आकर बोला, अंकल, क्या आप भी रेस में हिस्सा ले रहे हैं? नमन ने उल्टे उसी से पूछा, क्यों, क्या मैं इसमें हिस्सा नहीं ले सकता? लड़का खुश होते हुए बोला, अंकल, मैं भी जब बड़ा हो जाऊंगा, तब आपकी तरह रेस में हिस्सा लूंगा। नमन का विश्वास एक बार फिर से मजबूत हो गया। तभी पीछे से नमन का भाई आकर उससे पूछने लगा, क्या आप तैयार हैं? नमन बोला, बिल्कुल। सारे तैराक अपनी-अपनी जगह पर पहुंचे और नमन को शुभकामनाएं देने लगे। तभी रेफरी ने सीटी बजाई और नमन तथा बाकी सारे तैराक पूल में कूद गए। कुछ देर तक डर के मारे नमन की आंखें नहीं खुलीं। वह सोचने लगा, मेरे जैसे नि:शक्त आदमी को पूल में नहीं कूदना चाहिए था। उसने अपनी आंखें खोलीं। पानी के अंदर का नजारा इतना सुंदर था कि उसका सारा डर निकल गया। वह सोचने लगा, पूल में मैं अकेला नहीं हूं। मेरे साथ अनेक युवा हैं। बेशक शारीरिक क्षमता में मैं उनके समान नहीं हूं। पर हौसला तो मेरे साथ है। अगर आज मैंने अपना ख्वाब पूरा कर लिया, तो कल मेरे जैसे लोग भी अपने ख्वाब पूरे कर पाएंगे। नमन ने जोर लगाना शुरू कर दिया। वह प्रथम तो नहीं आ पाया, पर उसने पूल के पूरे दो राउंड सफलतापूर्वक खत्म कर लिए। जब वह पूल से निकला, तब तालियों की गड़गड़ाहट कई मिनटों तक सुनाई देती रही। नमन ने अनेक नि:शक्त बच्चों में नई उम्मीद भर दी थी।

यदि मकसद सही हो, तो सपने साकार करने की हिम्मत वक्त खुद देता है।